

“महाकौशल क्षेत्र में आदिवासी प्रतिरोध और स्वतंत्रता आंदोलन: जंगल सत्याग्रह के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन (1885-1947 ई.)”

पवन कुमार सोनिक

सहायक प्राध्यापक (इतिहास), शासकीय महाविद्यालय कुरई, सिवनी (म.प्र.)

डॉ. डी.पी. ग्वालवंशी

सहा.प्रा. (इतिहास), विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी, अ. स. (उशिवि)

भोपाल नर्मदापुरम, (म.प्र.)

सारांश: भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास-लेखन में प्रायः शहरी, मध्यवर्गीय और नेतृत्वपरक आंदोलनों को केंद्रीय स्थान दिया जाता रहा है, जबकि वनांचलों में रहने वाले आदिवासी समुदायों के प्रतिरोध को हाशिए पर रखा गया है। महाकौशल क्षेत्र—जिसमें वर्तमान जबलपुर, सिवनी, छिंदवाड़ा, बैतूल, नरसिंहपुर, मंडला, बालाघाट तथा होशंगाबाद जैसे जिले सम्मिलित थे—गोंड, कोरकू, बैगा, भारिया और अन्य जनजातियों का प्रमुख निवास-स्थल रहा है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य 1885 से 1947 ई. के मध्य महाकौशल क्षेत्र में आदिवासी प्रतिरोध की प्रकृति, उसके सामाजिक-आर्थिक कारणों तथा राष्ट्रीय आंदोलन से उसके अंतर्संबंधों का विश्लेषण करना है, जिसमें विशेष रूप से 1930 के दशक में हुए 'जंगल सत्याग्रह' पर केंद्रित अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक वन-नीति, विशेषतः भारतीय वन अधिनियम 1878 तथा 1927, ने आदिवासी समुदायों के परंपरागत जल-जंगल-ज़मीन के अधिकारों पर गहरा आघात किया, जिसके फलस्वरूप स्थानीय स्तर पर सविनय अवज्ञा के रूप में जंगल सत्याग्रह का उदय हुआ। यह आंदोलन गांधीवादी सत्याग्रह पद्धति और आदिवासी परंपरागत प्रतिरोध-चेतना के समन्वय का प्रतीक था, जिसने महाकौशल के आदिवासी समाज को राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ा।

बीज-शब्द : महाकौशल, आदिवासी प्रतिरोध, जंगल सत्याग्रह, वन अधिनियम, गोंड-कोरकू, सविनय अवज्ञा आंदोलन, औपनिवेशिक वन-नीति, स्वतंत्रता संग्राम।

1. प्रस्तावना

भारत का स्वतंत्रता संग्राम केवल राजनीतिक संगठनों और शहरी बुद्धिजीवी वर्ग तक सीमित नहीं था, अपितु उसमें देश के दूरस्थ वनांचलों में निवास करने वाले आदिवासी समुदायों की भी सक्रिय भागीदारी रही। मध्य भारत का महाकौशल क्षेत्र—जो सतपुड़ा और मैकल की पहाड़ियों तथा घने साल एवं सागौन के वनों से आच्छादित है—गोंडवाना साम्राज्य का ऐतिहासिक केंद्र रहा है और यहाँ गोंड, कोरकू, बैगा, भारिया, कोल आदि जनजातियों का दीर्घकालीन निवास रहा है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विस्तार के साथ ही इस क्षेत्र में वन-संसाधनों के व्यावसायिक दोहन की प्रक्रिया प्रारंभ हुई, जिसने आदिवासी समाज की परंपरागत जीवन-पद्धति, कृषि-प्रणाली तथा सांस्कृतिक अस्मिता को गहरे रूप से प्रभावित किया। इसी शोषण और अलगाव की प्रतिक्रिया में महाकौशल क्षेत्र में समय-

समय पर आदिवासी विद्रोह और प्रतिरोध के स्वर उभरते रहे, जिनकी परिणति 1930 के दशक में व्यापक 'जंगल सत्याग्रह' के रूप में हुई।

प्रस्तुत शोध-पत्र में 1885 ई. (भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना का वर्ष, जो आधुनिक संगठित राष्ट्रीय आंदोलन का प्रारंभ-बिंदु माना जाता है) से लेकर 1947 ई. (भारत की स्वतंत्रता) तक की अवधि में महाकौशल क्षेत्र के आदिवासी प्रतिरोध का ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन का केंद्र-बिंदु 'जंगल सत्याग्रह' है, किंतु उसे उचित ऐतिहासिक संदर्भ में समझने हेतु उससे पूर्व की घटनाओं-वन-कानूनों के प्रवर्तन, आदिवासी असंतोष के संचयन तथा 1857 के पश्चात्कर्त्ती छिटपुट विद्रोहों-का भी संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

1.1 अध्ययन के उद्देश्य

- (1) महाकौशल क्षेत्र की भौगोलिक-सामाजिक संरचना और आदिवासी समाज की जीवन-पद्धति को समझना।
- (2) औपनिवेशिक वन-नीति और उसके आदिवासी समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना।
- (3) महाकौशल में जंगल सत्याग्रह के उद्भव, स्वरूप, नेतृत्व एवं प्रमुख केंद्रों का अध्ययन करना।
- (4) जंगल सत्याग्रह के राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन से अंतर्संबंधों की पड़ताल करना।
- (5) इस आंदोलन में आदिवासी स्त्रियों की भूमिका तथा आंदोलन के ऐतिहासिक महत्त्व का मूल्यांकन करना।

1.2 शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। सामग्री-संकलन हेतु द्वितीयक स्रोतों-इतिहास ग्रंथों, शोध-पत्रों, समाचार-पत्रीय रिपोर्टों, स्थानीय इतिहासकारों के विवरणों तथा जनजातीय संग्रहालयों में उपलब्ध सामग्री-का उपयोग किया गया है। जहाँ संभव हुआ है, वहाँ मौखिक परंपरा और स्थानीय स्मृति में सुरक्षित घटनाओं का भी संदर्भ लिया गया है, क्योंकि आदिवासी प्रतिरोध का बड़ा भाग औपचारिक अभिलेखों में पर्याप्त रूप से दर्ज नहीं हो पाया।

2. महाकौशल क्षेत्र : भौगोलिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि

'महाकौशल' शब्द ऐतिहासिक रूप से नर्मदा घाटी के पूर्वी भाग तथा सतपुड़ा-मैकल पर्वत-श्रृंखलाओं से घिरे उस विस्तृत क्षेत्र के लिए प्रयुक्त होता है, जिसमें वर्तमान जबलपुर, सिवनी, छिंदवाड़ा, बैतूल, नरसिंहपुर, मंडला, बालाघाट, डिंडोरी तथा होशंगाबाद (वर्तमान नर्मदापुरम) के भू-भाग सम्मिलित हैं। यह क्षेत्र प्राचीन काल से गोंडवाना साम्राज्य के अंतर्गत रहा और गढ़ा-मंडला तथा देवगढ़ जैसी गोंड रियासतें यहाँ की प्रशासनिक-सांस्कृतिक धुरी रही हैं। भौगोलिक दृष्टि से सघन वन, पहाड़ी भूभाग तथा नदी-घाटियों से युक्त यह प्रदेश जनजातीय जीवन के लिए अत्यंत अनुकूल रहा है।

महाकौशल की प्रमुख जनजातियों में गोंड सबसे बड़ी और प्रभावशाली जनजाति रही है, इसके अतिरिक्त कोरकू, बैगा, भारिया, कोल, परधान आदि जनजातियाँ भी

यहाँ बड़ी संख्या में निवास करती थीं। इन समुदायों की अर्थव्यवस्था मुख्यतः वनोपज-संग्रहण, स्थानांतरी (झूम/बेवर) कृषि, लघु पशुपालन तथा वन-भूमि पर परंपरागत सामूहिक अधिकारों पर आधारित थी। वन इनके लिए केवल आर्थिक संसाधन नहीं, अपितु सामाजिक-धार्मिक जीवन का अभिन्न अंग भी था—वन-देवताओं की पूजा, सामुदायिक उत्सव तथा औषधीय ज्ञान परंपरा वन के साथ गहरे रूप से जुड़े हुए थे। यही कारण था कि जब औपनिवेशिक सरकार ने वनों पर राजकीय एकाधिकार स्थापित करने का प्रयास किया, तो उसका प्रतिरोध केवल आर्थिक नहीं, अपितु सांस्कृतिक-अस्तित्व का प्रश्न बन गया।

3. औपनिवेशिक वन-नीति और आदिवासी असंतोष के कारण

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से ब्रिटिश सरकार ने भारतीय वनों को राजस्व और सामरिक (रेलवे स्लीपर, जहाज़-निर्माण हेतु इमारती लकड़ी) दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में देखना प्रारंभ किया। इसी उद्देश्य से 1864 ई. में भारतीय वन विभाग की स्थापना हुई तथा वन-प्रबंधन को व्यवस्थित करने हेतु क्रमशः 1865, 1878 तथा 1927 ई. में भारतीय वन अधिनियम पारित किए गए। इन अधिनियमों के अंतर्गत विशाल वन-भूभाग को 'आरक्षित वन' (Reserved Forest) और 'संरक्षित वन' (Protected Forest) घोषित कर उन पर राजकीय नियंत्रण स्थापित कर दिया गया, जिससे आदिवासियों के परंपरागत सामूहिक अधिकार—चराई, ईंधन-लकड़ी संग्रहण, स्थानांतरी कृषि तथा लघु वनोपज संग्रहण—अत्यंत सीमित अथवा पूर्णतः प्रतिबंधित हो गए।

इस नीति के परिणामस्वरूप आदिवासी समुदाय अपने ही पुश्तैनी वनों में 'अतिक्रमणकारी' और 'अपराधी' घोषित कर दिए गए। वन विभाग के स्थानीय कर्मचारियों (रेंजर, गार्ड) द्वारा की जाने वाली मनमानी, बेगार-प्रथा, अवैध शुल्क-वसूली तथा शारीरिक दमन ने असंतोष को और गहरा किया। महाकौशल क्षेत्र में सागौन एवं साल की बहुमूल्य वन-संपदा होने के कारण यहाँ वन-विभाग का हस्तक्षेप विशेष रूप से तीव्र था, जिससे बैतूल, सिवनी, छिंदवाड़ा तथा मंडला जैसे जिलों में आदिवासी असंतोष निरंतर संचित होता रहा।

आर्थिक शोषण के साथ-साथ महाजनी प्रथा, साहूकारों द्वारा ऋणजाल में फँसाना, ज़मीन की बेदखली तथा जंगल-महसूल (राजस्व) में निरंतर वृद्धि ने भी आदिवासी जीवन को असुरक्षित बना दिया। इस प्रकार वन-कानून, राजस्व-नीति तथा प्रशासनिक दमन के त्रिविध दबाव ने महाकौशल के आदिवासी समाज में गहरे असंतोष को जन्म दिया, जो अंततः संगठित प्रतिरोध के रूप में प्रकट हुआ।

4. महाकौशल में प्रारंभिक आदिवासी प्रतिरोध (1885 से पूर्व तथा उसके बाद के छिटपुट विद्रोह)

1857 के महाविद्रोह से पूर्व और उसके समकालीन काल में भी मध्य भारत के आदिवासी क्षेत्रों में ब्रिटिश-विरोधी असंतोष के स्वर सुनाई देते हैं। यद्यपि महाकौशल क्षेत्र में 1857 का विद्रोह सीधे तौर पर उतना व्यापक नहीं था जितना अवध या बुंदेलखंड में, तथापि

गढ़ा-मंडला की गोंड रियासत के पतन और उसके बाद के प्रशासनिक पुनर्गठन ने स्थानीय आदिवासी सत्ता-संरचनाओं को गहरे रूप से अस्थिर कर दिया था, जिसका दीर्घकालीन प्रभाव आगे के असंतोष में देखा जा सकता है। मध्य भारत के व्यापक फलक पर देखें तो भूमकाल आंदोलन (बस्तर, 1876 तथा पुनः 1910 में गुण्डाधुर के नेतृत्व में), मुरिया विद्रोह (1876) तथा रानी चोरिस के नेतृत्व में हुआ विद्रोह इस बात के प्रमाण हैं कि मध्य भारतीय जनजातीय क्षेत्र वन-नीति और औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध निरंतर मुखर रहा।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ में जब भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ने संगठित रूप धारण किया, तो उसका प्रभाव धीरे-धीरे महाकौशल के वनांचलों तक भी पहुँचने लगा। 1920 के दशक में असहयोग आंदोलन के समय क्षेत्र के कुछ भागों में शराबबंदी, विदेशी वस्त्र-बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षा से जुड़े छोटे स्तर के जन-जागरण कार्यक्रम चले, जिन्होंने आगामी दशक के व्यापक जंगल सत्याग्रह की वैचारिक भूमि तैयार करने में सहायता की। मध्य भारत के ही धमतरी क्षेत्र (वर्तमान छत्तीसगढ़, तत्कालीन मध्य प्रांत का भाग) में जनवरी 1922 में हुआ नगरी-सिहावा जंगल सत्याग्रह—जिसका नेतृत्व श्यामलाल सोम, पं. सुंदरलाल शर्मा आदि ने किया—देश का प्रारंभिक जंगल सत्याग्रह माना जाता है, जिसने पड़ोसी महाकौशल क्षेत्र के आदिवासियों को भी प्रेरित किया।

5. जंगल सत्याग्रह : पृष्ठभूमि, स्वरूप एवं प्रमुख केंद्र

5.1 पृष्ठभूमि और आरंभ

1930 ई. में महात्मा गांधी द्वारा आरंभ किए गए नमक सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन ने संपूर्ण देश में जन-जागरण की लहर पैदा की। इसी प्रेरणा से मध्य प्रांत (Central Provinces) के महाकौशल क्षेत्र में आदिवासी समुदायों ने वन-कानूनों के विरुद्ध सविनय अवज्ञा के रूप में 'जंगल सत्याग्रह' का सूत्रपात किया। इस आंदोलन का मूल स्वरूप गांधीवादी अहिंसक सत्याग्रह-पद्धति पर आधारित था—सत्याग्रही जान-बूझकर वन-कानूनों का उल्लंघन करते हुए आरक्षित वनों में प्रवेश करते, लकड़ी काटते, घास काटकर पशु चराते और स्वेच्छा से गिरफ्तारी देते थे। बैतूल जिले के घोड़ाडोंगरी क्षेत्र को जंगल सत्याग्रह के प्रमुख आरंभ-स्थल के रूप में जाना जाता है, जहाँ स्थानीय कोरकू आदिवासी नेता गंजन सिंह कोरकू के नेतृत्व में वनवासियों ने अंग्रेजों के वन-कानून के विरुद्ध मोर्चा खोला।

यह आंदोलन शीघ्र ही महाकौशल के विस्तृत भूभाग—बैतूल, बंजारी, ढाल, छिंदवाड़ा, ओरछा (छिंदवाड़ा क्षेत्र), सिवनी, हरदा तथा जबलपुर के बरेला, नरसिंहपुर एवं मंडला जैसे अनेक क्षेत्रों—में फैल गया। सत्याग्रहियों की पहचान अत्यंत प्रतीकात्मक थी—वे एक हाथ में कुल्हाड़ी (अथवा हँसिया) और दूसरे हाथ में कंबल लेकर, कंधे पर कंबल डालकर टोलियों के रूप में जंगल की ओर निकलते और खुलेआम वन-कानून तोड़ते थे। छिंदवाड़ा क्षेत्र में 21 अगस्त 1930 को सत्याग्रहियों ने जिस विश्रामगृह में अंग्रेज अधिकारी ठहरते थे, वहाँ पहुँचकर चाँदी के हँसिये से घास काटकर प्रतीकात्मक रूप से ब्रिटिश

सत्ता को चुनौती दी—यह घटना आंदोलन की रचनात्मक-प्रतीकात्मक शैली का उल्लेखनीय उदाहरण है।

5.2 सिवनी (तुरिया) का जंगल सत्याग्रह और गोलीकांड

महाकौशल के जंगल सत्याग्रह में सिवनी क्षेत्र का आंदोलन सर्वाधिक प्रभावी और उग्र सिद्ध हुआ, जिसे 'आदिवासी जंगल सत्याग्रह तुरिया आंदोलन' के नाम से जाना जाता है। यहाँ दुर्गा प्रसाद मेहता, मुका लोहार तथा मुड्डो बाई जैसे स्थानीय नेताओं ने आदिवासी युवाओं की टोलियाँ संगठित कीं, जो एक हाथ में कुल्हाड़ी और दूसरे हाथ में कंबल लेकर जंगल में प्रवेश करतीं तथा घास और लकड़ी काटकर वन-कानून की खुली अवज्ञा करतीं। सत्याग्रहियों की बढ़ती संख्या और उनके दृढ़ संकल्प से हताश होकर ब्रिटिश प्रशासन ने बल-प्रयोग का सहारा लिया और सत्याग्रहियों पर गोली चलवा दी। इस गोलीकांड में तीन आदिवासी महिलाओं सहित एक पुरुष सत्याग्रही शहीद हुए। जिस स्थान पर यह गोलीकांड हुआ, वह क्षेत्र वर्तमान में पेंच राष्ट्रीय उद्यान (पेंच अभ्यारण) के नाम से जाना जाता है। यह घटना महाकौशल के जनजातीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में एक महत्वपूर्ण किंतु अपेक्षाकृत कम चर्चित अध्याय है।

5.3 बैतूल-छिंदवाड़ा क्षेत्र में आंदोलन और बादल भोई का बलिदान

छिंदवाड़ा अंचल के जंगल सत्याग्रह में बादल भोई (श्रीबादल भोई) जैसे स्थानीय आदिवासी नेताओं का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिनकी स्मृति में छिंदवाड़ा में 'जनजातीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी संग्रहालय' स्थापित किया गया है, जहाँ सत्याग्रह में प्रयुक्त हँसिया एवं अन्य औज़ार आज भी संरक्षित हैं। जनश्रुति एवं स्थानीय इतिहासकारों के अनुसार बादल भोई को बंदी बनाकर जेल में भोजन में विष देकर मार डाला गया, जो औपनिवेशिक दमन की क्रूरता का द्योतक है। बैतूल में गंजन सिंह कोरकू के नेतृत्व में चला आंदोलन इतना प्रभावी रहा कि अंग्रेज प्रशासन में उनके नाम मात्र से भय व्याप्त हो जाता था। इन क्षेत्रीय नेताओं ने स्थानीय भाषा, परंपरा और सामुदायिक संरचना का उपयोग करते हुए आंदोलन को जन-जन तक पहुँचाया, जिससे यह एक व्यापक जन-आंदोलन का रूप ले सका।

5.4 आंदोलन का संगठनात्मक स्वरूप

जंगल सत्याग्रह के संगठनात्मक स्वरूप में स्थानीय कांग्रेस कार्यकर्ताओं और आदिवासी परंपरागत नेतृत्व (मुखिया, पटेल, गायता आदि) के मध्य समन्वय स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कांग्रेस के प्रांतीय एवं ज़िला स्तर के नेताओं ने सत्याग्रह की तिथि और स्थान निर्धारित कर वन-विभाग को पूर्व-सूचना देने की गांधीवादी नीति अपनाई, जिससे आंदोलन की नैतिक वैधता स्थापित हो सके। इसके साथ ही स्थानीय आदिवासी नेतृत्व ने अपनी परंपरागत सामुदायिक संरचना के माध्यम से सैकड़ों की संख्या में सत्याग्रहियों को संगठित किया। सत्याग्रह में भाग लेने वाले अधिकांश व्यक्ति निरक्षर वनवासी थे, किंतु उनकी

प्रतिबद्धता और अनुशासन उल्लेखनीय रहा—गिरफ्तारी, कारावास और शारीरिक दमन के बावजूद आंदोलन कई महीनों तक निरंतर चलता रहा।

6. जंगल सत्याग्रह में आदिवासी स्त्रियों की भूमिका

महाकौशल के जंगल सत्याग्रह की एक विशिष्ट विशेषता आदिवासी स्त्रियों की सक्रिय और अग्रणी भागीदारी है। सिवनी-तुरिया आंदोलन में मुड्डो बाई का नेतृत्व तथा गोलीकांड में तीन आदिवासी महिलाओं का बलिदान इस तथ्य का प्रमाण है कि आदिवासी समाज में स्त्री-पुरुष दोनों समान रूप से प्रतिरोध-चेतना से संपन्न थे। परंपरागत रूप से वन-संसाधनों के संग्रहण (ईंधन-लकड़ी, लघु वनोपज, चारा) का दायित्व मुख्यतः स्त्रियों पर रहा है, अतः वन-कानूनों का सर्वाधिक प्रत्यक्ष प्रभाव भी उन्हीं पर पड़ा। यही कारण था कि सत्याग्रह की टोलियों में स्त्रियाँ पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सम्मिलित हुईं और गिरफ्तारी तथा दमन का साहसपूर्वक सामना किया। स्त्रियों की यह भागीदारी न केवल जंगल सत्याग्रह अपितु समकालीन राष्ट्रीय आंदोलन की व्यापक प्रवृत्ति—जिसमें गांधीजी के आह्वान पर स्त्रियों की सक्रिय सहभागिता बढ़ी—का ही एक क्षेत्रीय प्रतिबिंब थी।

7. जंगल सत्याग्रह और राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन का अंतर्संबंध

महाकौशल का जंगल सत्याग्रह केवल एक स्थानीय अथवा आर्थिक विरोध-आंदोलन न होकर राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम की व्यापक धारा से गहराई से जुड़ा हुआ था। यह आंदोलन प्रत्यक्षतः महात्मा गांधी के नमक सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930) से प्रेरित था, तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मध्य प्रांत संगठन के स्थानीय कार्यकर्ताओं ने इसे सक्रिय समर्थन एवं नेतृत्व प्रदान किया। इस प्रकार जंगल सत्याग्रह ने गांधीवादी अहिंसक सत्याग्रह-पद्धति को आदिवासी सामुदायिक प्रतिरोध-परंपरा के साथ जोड़कर एक नए प्रकार के जन-आंदोलन को जन्म दिया, जिसमें राष्ट्रीय स्वाधीनता की माँग और स्थानीय जल-जंगल-ज़मीन के अधिकारों की रक्षा परस्पर गुँथी हुई थी।

इसके अतिरिक्त, 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के समय भी महाकौशल क्षेत्र के आदिवासी समुदायों ने सक्रिय भूमिका निभाई—रेल तथा तार-व्यवस्था बाधित करने, भूमिगत कांग्रेस कार्यकर्ताओं को शरण देने तथा स्थानीय स्तर पर समानांतर प्रशासन-व्यवस्था स्थापित करने जैसे कार्यों में आदिवासी सहभागिता के प्रमाण मिलते हैं। इस प्रकार 1930 के जंगल सत्याग्रह से प्राप्त संगठनात्मक अनुभव और राजनीतिक चेतना ने आगे चलकर 1942 के आंदोलन में भी महाकौशल के आदिवासी समाज को सक्रिय भूमिका निभाने हेतु सक्षम बनाया।

8. आंदोलन का ऐतिहासिक महत्त्व एवं मूल्यांकन

महाकौशल के जंगल सत्याग्रह का ऐतिहासिक महत्त्व अनेक दृष्टियों से रेखांकित किया जा सकता है। प्रथमतः, इसने यह प्रमाणित किया कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम केवल शहरी अथवा शिक्षित मध्यवर्ग तक सीमित नहीं था, अपितु वनांचलों के निरक्षर एवं सीमांत समुदाय भी राष्ट्रीय चेतना से गहराई से जुड़े हुए थे। द्वितीयतः, इस आंदोलन ने पर्यावरणीय

न्याय और राष्ट्रीय स्वाधीनता के मध्य के अंतर्संबंध को उजागर किया—आदिवासियों के लिए स्वतंत्रता का अर्थ केवल राजनीतिक सत्ता-परिवर्तन नहीं, अपितु अपने परंपरागत वन-संसाधनों पर पुनः अधिकार प्राप्त करना भी था। तृतीयतः, आंदोलन में स्त्रियों की सक्रिय भागीदारी ने आदिवासी समाज की सामाजिक संरचना में विद्यमान अपेक्षाकृत समतामूलक लैंगिक चेतना को भी प्रदर्शित किया।

दुर्भाग्यवश, महाकौशल का जंगल सत्याग्रह मुख्यधारा के इतिहास-लेखन में समुचित स्थान प्राप्त नहीं कर सका। इसके प्रमुख कारणों में आदिवासी समाज की मौखिक परंपरा, लिखित अभिलेखों का अभाव, तथा राष्ट्रीय इतिहास-लेखन में क्षेत्रीय एवं जनजातीय आंदोलनों की उपेक्षा की प्रवृत्ति सम्मिलित हैं। हाल के वर्षों में स्थानीय इतिहासकारों, शोधकर्ताओं तथा सांस्कृतिक संस्थाओं (जैसे छिंदवाड़ा का जनजातीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी संग्रहालय, तथा 'जंगल सत्याग्रह' नामक फ़िल्म का निर्माण) द्वारा इस विस्मृत अध्याय को पुनः सार्वजनिक स्मृति में लाने के प्रयास सराहनीय हैं।

9. उपसंहार

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 1885 से 1947 ई. के मध्य महाकौशल क्षेत्र में आदिवासी प्रतिरोध की एक सतत एवं विकासशील परंपरा दृष्टिगोचर होती है, जो प्रारंभिक छिटपुट विद्रोहों से आरंभ होकर 1930 के दशक में संगठित एवं व्यापक जंगल सत्याग्रह के रूप में परिणत हुई। इस आंदोलन ने न केवल औपनिवेशिक वन-नीति के विरुद्ध आदिवासी समाज के दृढ़ प्रतिरोध को प्रदर्शित किया, अपितु राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के साथ उसके गहरे वैचारिक एवं संगठनात्मक अंतर्संबंध को भी उजागर किया। बैतूल के घोड़ाडोंगरी, सिवनी के तुरिया, छिंदवाड़ा तथा जबलपुर, नरसिंहपुर एवं मंडला के अनेक केंद्रों में हुए इस आंदोलन में गंजन सिंह कोरकू, दुर्गा प्रसाद मेहता, मुका लोहार, मुड्डो बाई तथा बादल भोई जैसे स्थानीय नायकों का योगदान अविस्मरणीय है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के समग्र और समावेशी इतिहास-लेखन हेतु आवश्यक है कि महाकौशल के जंगल सत्याग्रह जैसे क्षेत्रीय एवं जनजातीय आंदोलनों को समुचित शोध, अभिलेखीकरण तथा राष्ट्रीय स्मृति में उचित स्थान प्रदान किया जाए।

संदर्भ सूची

1. बंधोपाध्याय, शेखर, आधुनिक भारत का इतिहास: पलासी से विभाजन तक और उसके बाद, ओरिएंट ब्लैकस्वान पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. सरकार, सुमित, मॉडर्न इंडिया (1885-1947), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993।
3. Indian Forest Act, 1878, भारत सरकार।
4. Indian Forest Act, 1927, भारत सरकार।
5. भारतीय स्वतंत्रता के पूर्व के आदिवासी विद्रोह, हिन्दी विकिपीडिया।
6. 'महाकौशल का जंगल सत्याग्रह, जब वनों को बचाने अंग्रेजों से भिड़े आदिवासी', ईटीवी भारत, जबलपुर संस्करण।

7. 'चांदी के हंसिये से घास काटकर किया था अंग्रेजों का विरोध', ईटीवी भारत, छिंदवाड़ा संस्करण।
8. 'बैतूल का जंगल सत्याग्रह : इतिहास की गुमनाम गाथा', सबलोग पत्रिका।
9. 'मध्यप्रदेश के बैतूल जिले से जंगल सत्याग्रह नायक गंजन सिंह कोरकू की कहानी', भारत संवाद।
10. 'भोपाल में जंगल सत्याग्रह फिल्म का प्रीमियर : आदिवासी नायकों के संघर्ष की गाथा', द मूकनायक।
11. 'छत्तीसगढ़ में जंगल सत्याग्रह', साहपीडिया (Sahapedia)।
12. 'स्वतंत्रता आंदोलन, जंगल कानून और मध्यभारत में जंगल सत्याग्रह', शोध-लेख।